राजेश रेड्डी

तीन ग़ज़ल

(1)

आँसुओं वाली हर एक बात को छोटा करके
मुस्कुरा लेते हैं हालात को छोटा करके

ज़िन्दगानी के तक़ाज़े ही थे कुछ इतने शदीद
दिन बड़ा करना पड़ा रात को छोटा करके

धूप की तेज़ी तो सह लेता है छप्पर मेरा
देख सकता नहीं बरसात को छोटा करके

वक़्त ख़ुद आपके क़दमों में झुका आएगा
देखिये वक़्त की औक़ात को छोटा करके

ज़िन्दगी अपनी करिश्मा या करामत ही तो है
देखते क्यूँ हो करामात को छोटा करके

उसने जिस हाथ से तामीर किया ताजमहल
रख दिया वक़्त ने उस हाथ को छोटा करके

अश्क आँखों मे तरसते हैं बरसने के लिये
लोग जब जीते हैं जज़्बात को छोटा करके

गोलियाँ गाँधी को देता रहा ईसा को सलीब
रक्खा हर दौर ने सुक़रात को छोटा करके

चल ही देते हैं परिन्दे बड़ी परवाज़ों पर
आस्मानों के तिलिस्मात को छोटा करके

(2)

अपने भी ख़्वाब देखें बिखर तो नहीं गए
जीते जी हम भी जिस्म में मर तो नहीं गए

हासिल तो हो गई हैं हमें भी बुलन्दियाँ
नज़रों से अपनी हम भी उतर तो नहीं गए

क्यूँ आ रही हैं कमरे से मासूम सुबकियाँ
बच्चे हमारे नींद में डर तो नहीं गए

कोई हमें भुलाके भी जीता है ज़िन्दगी
हम भी किसी की याद में मर तो नहीं गए

अफ़सोस क्या सरों से जो दस्तारें गिर गईं
ये लोग इसपे ख़ुश हैं कि सर तो नहीं गए

क्यूँ इन दिनों नहीं है ज़माने से कुछ गिला
औरों के साथ हम भी सुधर तो नहीं गए

तामीर कर दिखाएँगे फिर ताज हम नया
गो हाथ कट गए हैं हुनर तो नहीं गए

तहज़ीब उस जहान की आने लगी इधर
आदाब इस जहाँ के उधर तो नहीं गए

छप्पर तो अपने जाने ही वाले थे अबके भी
आँधी में अबके बूढ़े शजर तो नहीं गए

(3)

जो हो सके तो लकीर होना
लकीर का मत फ़क़ीर होना

मैं जानता हूँ अमीर होना
ज़रा-ज़रा बेज़मीर होना

मैं फूँक कर घर कलप रहा हूँ
न आया मुझको कबीर होना

चुना हमीं ने निशाना बनना
हमें भी आता था तीर होना

वज़ीर तो चाहे बादशाही
पयादा चाहे वज़ीर होना

ख़ज़ाने अन्दर के ढूँढ़ पाना
नहीं है आसाँ फ़क़ीर होना

क़दम तले चाहते हैं मंज़िल
किसे है अब राहगीर होना

लगा रहा है ग़मों के मेले
ख़ुशी की ख़ातिर अधीर होना

है फ़िक्रो-फ़न के करिश्मे जैसा
ग़ज़ल में ग़ालिब या मीर होना

अवध बिहारी श्रीवास्तव

गीत

सीढ़ियों पर चुप्पियाँ

सीढ़ियों पर चुप्पियाँ बैठीं
आज के अख़बार को पढ़कर

ख़ून के छींटे उड़े, उड़कर
पड़ रहे फ्राकों, कमीजों पर
हर तरफ हैं बाज के पंजे
भाग कर जायें कहाँ किस घर

चहचहाना बंद चिड़ियों का
फेफड़ों में भर गया है डर

भागते खरगोश पिंजरों में,
भेड़ियों की गंध आती है
'देवताओं' पर चढ़ी 'तुलसी'
रोज गंगा फेंक जाती है

कल न हो बारी, हमारी भी,
गाँव में 'दानव' बसा आकर

एक घटना फिर घटेगी कल,
लोग पढ़ लेंगे मजे लेकर
पीठ ठोंकेंगे सभी पर्दे,
बिना पर्दे की कथा देकर

चुप रहोगी कब तलक
चुप्पी,
देह में ज्वालामुखी,
भरकर

अग्नि संभवा

पाँच पाण्डवों ने पकड़ा है
'कृष्णा' को बाजार में
पहले पन्ने पर आई है,
ख़बर, आज अख़बार में

कैसे उसके कपड़े फाड़े
उसका क्या क्या दिखा कहाँ
खींच ले गए किधर गली में,
कैसे क्या क्या किया वहाँ

आँखों देखा हाल लिख रहे
पत्रकार जी कार में

कोई दोष नहीं है लेकिन
आँखें नीची थाने में
चीर-हरण फिर हुआ, द्रोपदी का
सच सच बतलाने में

वहीं सैकड़ों कृष्ण नपुसंक
खड़े रहे दरबार में

पुतले पाँच बनाए उसने,
फिर पाँचों के सिर काटे

अग्नि संभवा आग हो गई
छोड़ गई है सन्नाटे

करते रहो न्याय का नाटक
भरी कचहरी, बार में

बायाँ-हाथ

देने चला गवाही 'जुम्मन'
झूठी बातों की

राजा ने बुलवाया होगा
भेजा हरकारा
राज सुखों की चिट्ठी थी
क्या करता बेचारा

राजा को चिन्ता है, अपने
सिंहासन भर की,
जुम्मन को चिन्ता है, अपनी
भूखी रातों की

चाय-पान थोड़ी सुख सुविधा
मिलती रहे अगर
'जुम्मन' बायाँ हाथ टीप दे
दस्तावेजों पर

भाई और भतीजे राजा के
कम हैं वरना,
राजा को दरकार नहीं,
'जुम्मन' के छातों की

गेहूँ के खेतों में राजा
सड़कें बनवाए
अपना 'अर्थशास्त्र' जुम्मन को
राजा समझाए

नए नए रिश्ते जुम्मन के
अब दरबारों से,
याद नहीं अन्तिम कतार के
रिश्ते नातों की

'एकलव्य' होकर

'सिंहासन' कंधों पर ढोते
कोड़े सहते हम

खेती देसी साँड़ विदेशी
छुट्टा घूम रहे
रक्षक रजवाड़ों के पाले
उनसे कौन कहे

गाली, गोली, डंडा, लाकप
भाषा राजा की,
हे सरकार बंद कर आँखों को,
चुप रहते हम

गली मुहल्लों तक में राजाओं
की, टोली है
गद्दी है, मंदिर है, माथे
चंदन रोली है

गाँव-अनेई से दिल्ली तक
इनका गठबन्धन,
सापों की इस जकड़न से ही
हरदम डरते हम

पूरी 'गीता' नहीं, याद है
'यदा-यदा' केवल
युगों-युगों से भोग रहे हैं,
पोथी का यह छल

धनुष, अँगूठा दान दे दिया
हमने गुरुओं को,
क्रोध नहीं तो 'एकलव्य' होकर
क्या करते हम

'सोने से पहले'

दरवाजे खिड़कियाँ देख लूँ
आने से पहले बिस्तर पर

दूध उबलने को रक्खा है
उबल जाय रख दूँ तो आँऊ
अम्मा जी का पैर दु:ख रहा,
जाकर थोड़ी देर दबाऊँ

जूठे बरतन पड़े हुए हैं
आती हूँ चौके को धोकर

छोड़ों हाथ अभी देवर जी
आये कहाँ शहर से पढ़कर
बाहर बाबू जी बैठे हैं,
'बहू जागते रहना' कहकर

चार गरम रोटियाँ सेंक लूँ
बस आती हूँ उन्हें खिलाकर

पैर पटकना बंद करो अब
एक मिनट आवो आँगन में
टँगे हुए कपड़े उतार लो,
बाहर भीगेंगे सावन में

चलती तो हूँ साथ तुम्हारे
लेकिन चूर हुई हूँ थककर

वागर्थ और नया ज्ञानादेय में गीत प्रकाशित। 'हल्दी के छापे' गीतों का संग्रह छपा है। कानपुर में रहते हैं।